में परिवर्तन एवं गर्म हवाएं चलने के कारण उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ने लगा है, तब खेती में समय प्रबन्धन का महत्व और भी बढ़ गया है।

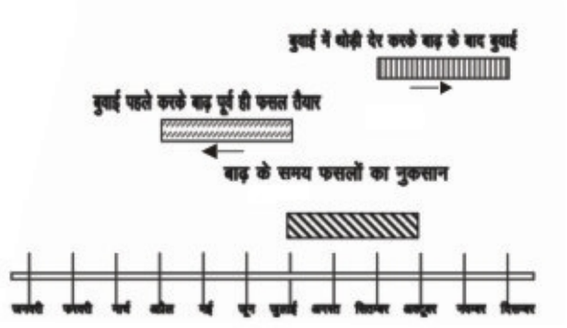

फसलों की उचित प्रजातियाँ जो बाढ़ पूर्व/उपरान्त बोई जा सकती है, बाढ़ के नुकसान से बचा सकती है।

स्थान प्रबन्धन

खेती में स्थान प्रबन्धन का बहुत महत्व है। एक छोटे से क्षेत्र पर नियोजन करते हुए अधिक से अधिक फसलों को उपजाना ही स्थान प्रबन्धन है। स्थान प्रबन्धन को हम दो तरीके से देख सकते हैं। पहला तो यह कि जमीन के नीचे का प्रबन्धन करते हुए कई स्तर की जड़ों वाली (गहरे जड़, मूसला जड़, उथला जड़) फसलों की बुवाई करें और दूसरा जमीन के ऊपर कई स्तरों पर फसल लगाकर उस सीमित स्थान का प्रबन्धन बेहतर तरीके से करते हुए अच्छी उपज प्राप्त कर सकते हैं।

स्थान प्रबन्धन का दूसरा उदाहरण आपदा ग्रस्त क्षेत्र में बहुस्तरीय खेती हो सकती है। बहुस्तरीय खेती से तात्पर्य ऐसी खेती से है, जिसमें खेत में विभिन्न गहराइयों में एक साथ 2-4 फसलें अपना पोषण प्राप्त करती हैं और साथ-साथ बढ़ती हैं तथा फलत होती रहती है। जैसे- लौकी, बोड़ा, मूंगफली, मक्का, हल्दी, पीपल, मूली आदि की खेती में लौकी, बोड़ा की जडें 8-10 इंच गहराई से भोजन प्राप्त करती हैं और इनको ऊपर मचान पर चढ़ा देते हैं जहां फलत होती है। वहीं मूंगफली का पौधा 3-3.5 इंच गहराई से अपना भोजन लेता है और 1-1.5 इंच गहराई में फलती है। मक्का की जड़ें अपस्थानिक होती हैं। अधिक से अधिक 8-10 इंच गहराई तक जाकर अपना भोजन लेती हैं और इनका पौधा 4-6 फीट ऊपर उठकर फूलता-फलता है। इस प्रकार एक ही क्षेत्र के विभिन्न रूट जोन से पोषण प्राप्त कर जब विभिन्न स्तर में खेती होती है, तो वह बहुस्तरीय खेती कहलाती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि कृषि में संभावनाएं असीम हैं। लघु सीमान्त किसानों के लिए, जिनको अपने श्रम पर अधिक भरोसा है, वे थोड़ी सी सूझ-बूझ एवं तकनीक का प्रयोग कर बड़े नुकसान से बच सकते हैं। ■

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप
पोस्ट बाक्स नं० 60, गोरखपुर-273001
दूरभाष : 91 551 2230004 फैक्स : 91 551 2230005
ई-मेल : geag@geagindia.org, geagindia@gmail.com

पैक्स
नई दिल्ली

जलवायु अनुकूलित कृषि : कुछ संभावनाएं

छत पर धान की नर्सरी

कृषि की उत्पादकता पूरी तरह से मौसम, जलवायु और पानी की उपलब्धता पर निर्भर होती है, इनमें से किसी भी कारक के बदलने अथवा स्वरूप में परिवर्तन से कृषि उत्पादन प्रभावित होता है। कृषि का प्रकृति से सीधा सम्बन्ध है, जल-जंगल-जमीन ही प्रकृति का आधार है और यही कृषि का भी। आपदाओं से कृषि पहले भी खतरे में पड़ती रही है। बाढ-सूखा-भूस्खलन जैसी घटनाओं ने कई बार किसानों को भुखमरी के कगार पर खड़ा किया है, लेकिन ये आपदायें अनेक वर्षों में एक बार आती थीं इसलिए किसान संभल जाता था। आज ऐसी आपदाएं प्रतिवर्ष आ रही हैंऔर अपने भीषणतम स्वरूप में आ रही हैं ऐसे में किसानों को इनसे निपटने के लिए उपाय ढूँढ़ना मुश्किल होता जा रहा है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव एक महत्वपूर्ण विषय इसलिए हो जाता है क्योंकि :

- भारत एक विशाल देश है जहाँ जलवायु में बहुत विविधता देखी जा सकती है।
- मानसून पर बहुत ज्यादा निर्भरता है।
- जलवायु और जल संसाधन के बीच सीधा जुड़ाव है।
- दो तिहाई क्षेत्र वर्षा आधारित कृषि पर निर्भर है।
- 70 प्रतिशत ऐसे लोग कृषि पर निर्भर हैं जिनके पास 1 से 5 हेक्टेयर खेती है।

उपरोक्त स्थितियां तो हैं, पर लोग इसमें अपनी जीवितता भी बनाये हुए हैं। अनेकानेक शोध एवं सर्वे यह बताते हैं कि समुदाय के लोगों ने अपने ज्ञान, कौशल, पलायन कर आजीविका अर्जित करने, फसलों में बदलाव, उचित तकनीकों के चुनाव आदि से लोगों को इन आपदाओं व इनके चरित्र से निपटने में मदद मिलती रही है।

क्या है सहनक्षमता

आपदाओं से निश्चित तौर पर समुदाय प्रभावित हो रहा है, परन्तु उसकी जूझने की क्षमता भी उतनी ही है। वह कठिन परिस्थितियों में गिरता है और फिर उठ खड़ा हो सकता है। आपदा की घड़ी समाप्त हो जाने के बाद खत्म हुए मूल संसाधनों और अप्रसंगिक हो रहे परम्परागत ज्ञान व हुनर के साथ बहुसंख्य किसान वर्ग अपनी आजीविका को एक नया आयाम देने के लिए फिर से

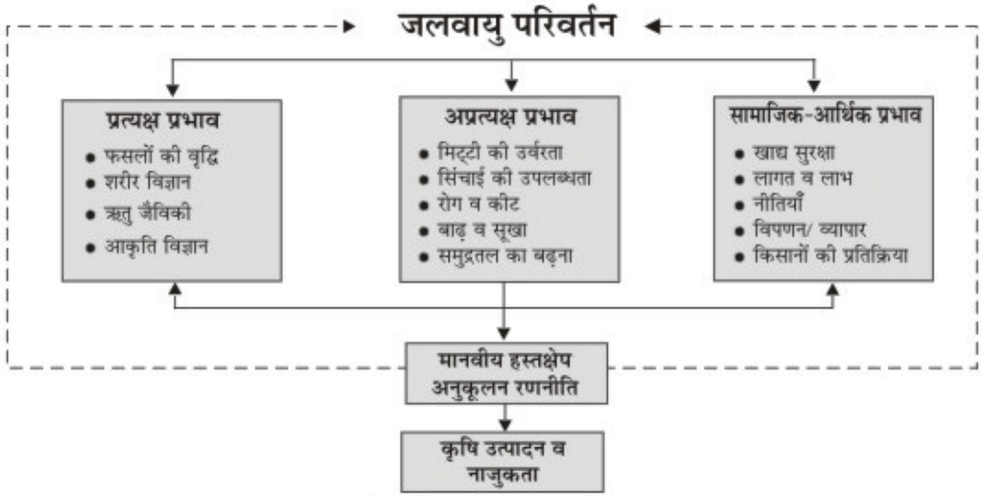

कृषि की नाजुकता का आंकलन

स्रोत : *क्लाइमेट चेन्ज इम्पैक्ट ऑन एग्रीकल्चर इन इण्डिया की शीट 6- आई०ए०आर०आई० व एम०ओ०इ०एफ०*

प्रयास करते हैं और अपने पुराने ज्ञान में तकनीकी समावेश करते हुए उसे समय के साथ सामंजस्य बिठाने की कोशिश करते हैं, यही रणनीति जब समय की कसौटी पर खरी उतरती है तो उसे अनुकूलन कहते हैं।

क्षेत्र प्रबन्धन

आपदा से निपटने हेतु कृषि की विभिन्न गतिविधियों जैसे- कृषि पूरक गतिविधियों का समन्वयन, बाढ़/सूखा अवरोधी प्रजातियों, स्थान एवं समय प्रबन्धन, मिश्रित खेती, खेती में विविधता, एकीकृत खेती, बहुस्तरीय खेती, अगैती खेती, खेतीगत कार्यों में नव तकनीक (एस0आई0आर0, एस0डब्ल्यू0आई0)आदि के समन्वयन को ही क्षेत्र प्रबन्धन की संज्ञा देते हैं। इनकी मदद से आपदाग्रस्त स्थितियों से कुछ हद तक निपटा जा सकता है।

एकीकृत क्या है ?

कृषि का प्रत्येक तंत्र एक दूसरे से आवश्यकताओं का आदान-प्रदान करता है इसलिए एक दूसरे पर निर्भर रहता है जैसे जानवरों के मल-मूत्र से खाद बनती है, जो

खेत में जाती है पर बदले में खेत जानवरों को चारा आदि देते हैं। घर से खेत में श्रम और खाद, पानी व अन्य लागत आती है तो बदले में खेत से घर में अनाज, भूसा आदि जाता है। इसी प्रकार जानवर से घर को दूध, दही, गोबर, मूत्र आदि मिलता है तो जानवर को घर से चारा आदि मिलता है। खेती के इस पूरे तंत्र को देखें तो पायेंगे कि इनमें से विभिन्न तंत्रों में आपसी लेन-देन होता रहता है और यह तंत्र अपनी आवश्यकताएं एक-दूसरे से प्राप्त करते रहते हैं। इनके बीच यदि संतुलित प्रयोग किया जाये तो खेती एवं जीवन के बीच स्थिरता बढ़ेगी।

इस एकीकृत प्रक्रिया में खेती से सम्बन्धित बहुत से उपतंत्र भी शामिल हैं। जैसे- गृहवाटिका, बहुवर्षीय वृक्ष, खाद इकाई, मुर्गी/बत्तख पालन, मछली पालन आदि। उत्तर प्रदेश के पूर्वी क्षेत्र की जलवायु में त्वरित परिवर्तन के कारण बाढ़ और सूखा दोनों ही स्थितियां उत्पन्न होती हैं। इन स्थितियों से निपटने हेतु कृषि प्रणाली में वृक्षारोपण, पशुपालन, गृहवाटिका, मछली, मुर्गी/बत्तख पालन आदि का समावेश इस तंत्र के स्थाईकरण में दृढ़ स्तम्भ की तरह कार्य करता है। किसान इस तरह की एकीकृत कृषि प्रणाली को अपनाकर आजीविका के स्थाईत्व की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

समय प्रबन्धन

खेती में समय प्रबन्धन का महत्व हमेशा से ही रहा है। पहले भी जब किसान चूक जाता था और समय से रबी खरीफ की बुवाई नहीं कर पाता था तो उसे हानि उठानी पड़ती थी, परन्तु आज यह आवृत्ति बढ़ गयी है, क्योंकि बदलती जलवायु परिस्थितियों में जब मानसून के समय